पटना में उच्च न्यायालय की अधिकारिता में

2014 की दीवानी याचिका अधिकारिता वाद संख्या. 9696

में

2018 की लेटर्स पेटेंट अपील संख्या 226

==========

जय प्रकाश नारायण सिन्हा, पुत्र- स्वर्गीय रघुनाथ सहाय, निवासी- गाँव-प्राणपुर, थाना- बेलागंज, जिला- गया।

.... अपीलार्थी/ओं

बनाम

1. बिहार राज्य द्वारा आयुक्त, मगध मंडल
2. आयुक्त, मगध प्रमण्डल, गया।
3. उप समाहर्ता (प्रतिष्ठान), जहानाबाद।
4. उप विकास आयुक्त, जहानाबाद।

.... उत्तरदाता/ओं

==========

उपस्थिति:

अपीलार्थी के लिएः श्री बिनोद कंठ, वरिष्ठ अधिवक्ता

श्री अमरेंद्र नाथ वर्मा, अधिवक्ता

राज्य के लिए: श्री सरोज कुमार शर्मा, ए.ए.जी.-3 के ए.सी

सेवा कानून -निर्धारित प्रक्रिया का एक विशेष तरीके से पालन एवं विचलन,- *अपीलकर्ता, जो टाइपिस्ट-कम-क्लर्क है, पर जिला मजिस्ट्रेट के जाली हस्ताक्षर करके 14 वाउचर भुनाने का प्रयास करके 8,975 रुपये की हेराफेरी करने का आरोप लगाया गया था। निलंबित होने और बाद में बर्खास्त होने के बाद, अपीलकर्ता ने प्रक्रियात्मक निष्पक्षता के उल्लंघन और स्थापित नियमों का पालन न करने का हवाला देते हुए विभिन्न न्यायिक मंचों पर कार्यवाही और बर्खास्तगी को चुनौती दी।*

अपील में 15 जनवरी 2018 के विवादित निर्णय की सत्यता पर प्रश्न उठाया गया है, जिसके तहत विद्वान एकल न्यायाधीश ने अपीलकर्ता की याचिका को यह कहते हुए खारिज कर दिया था कि अनुशासनात्मक कार्यवाही में अपीलकर्ता को सजा देते समय अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा प्रक्रिया और अवसर, जैसा कि दावा किया गया था, दोनों का पालन किया गया था, जहां 8,975 रुपये के कुछ वाउचरों के खिलाफ एक निश्चित राशि का गबन करने का आरोप था।

अभिनिर्धारित - यह पाया गया कि अनुशासनात्मक अधिकारी अपीलकर्ता को महत्वपूर्ण दस्तावेजों की प्रति प्रदान करने में विफल रहे, जिसमें जिला मजिस्ट्रेट का वह पत्र भी शामिल है जिसमें वाउचर पर उनके हस्ताक्षर को अस्वीकार किया गया था। इसके अलावा, अपीलकर्ता को गवाहों से जिरह करने या उसके खिलाफ सबूतों को चुनौती देने का उचित अवसर नहीं दिया गया। प्रक्रियात्मक मानदंडों का यह उल्लंघन प्राकृतिक न्याय का उल्लंघन है।

अनुशासनात्मक कार्यवाही में प्रक्रियागत निष्पक्षता का पालन अनिवार्य है। मुख्य प्रक्रियागत आवश्यकताओं में आरोपित कर्मचारी को सभी प्रासंगिक दस्तावेज और गवाहों से जिरह करने के अवसर प्रदान करना शामिल है, जैसा कि सिविल सेवा नियम, 1930 के नियम 55 के तहत निर्धारित है। - सजा के आदेश के परिणामस्वरूप नागरिक परिणाम सामने आए हैं और तथ्यों पर यह पाया गया है कि निष्पक्ष अवसर से वंचित करने के साथ-साथ प्रासंगिक दस्तावेज की आपूर्ति न करने से वास्तविक पूर्वाग्रह पैदा हुआ है। प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत के रूप में निहित एक वैधानिक प्रावधान के अधिदेश का उल्लंघन किया गया है। इस बात को निम्नलिखित निर्णयों से प्राप्त हमारे निष्कर्षों में पूर्ण समर्थन प्राप्त है:

1. (1996) 3 एससीसी 364 (स्टेट बैंक ऑफ पटियाला बनाम एस.के. शर्मा)

2. (2006) 9 एससीसी 691 (मारवाड़ ग्रामीण बैंक बनाम रामपाल चौहान)

3. 1995 सप(3) एससीसी 212 (एस.सी. गिरोत्रा बनाम यूनाइटेड कमर्शियल बैंक)

4. 1970 (1) एससीसी 479 (पंजाब राज्य बनाम दीवान चुन्नीलाल)

टेलर बनाम टेलर [(1876) 1 चांसरी डिवीजन 426], उसके बाद [1964] एसी 40 (रिज बनाम बाल्डविन और अन्य) और एआईआर 1978 एससी 851 (मोहिंदर सिंह गिल और अन्य बनाम मुख्य चुनाव आयुक्त, नई दिल्ली और अन्य) से लेकर कई फैसलों में यह बात अब तक पूरी तरह से तय हो चुकी है कि अगर निर्धारित प्रक्रिया का पालन किसी खास तरीके से किया जाना है, तो उससे अलग नहीं हुआ जा सकता और तदनुसार ऐसी प्रक्रिया का कोई भी उल्लंघन किसी भी प्रशासनिक या अर्ध-न्यायिक कार्रवाई को प्रभावित करेगा, खासकर अनुशासनात्मक कार्यवाही में। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, जिला मजिस्ट्रेट की जांच की निर्धारित प्रक्रिया से अलग होने या हस्ताक्षर से इनकार किए गए पत्र की प्रति प्रदान न करने के लिए कोई असाधारण परिस्थिति नहीं थी।

तदनुसार, अपील स्वीकार की जाती है और दिनांक 15.01.2018 के विवादित निर्णय के साथ-साथ दिनांक 17.01.2013 के दंड आदेश और साथ ही दिनांक 28 मार्च, 2014 के अपीलीय आदेश को रद्द किया जाता है - अपीलकर्ता को सभी परिणामी लाभों के साथ सेवा में बहाल किया जाएगा। प्रतिवादी तदनुसार उसे वेतन, भत्ते और नियमों के अनुसार स्वीकार्य सभी परिलब्धियों के साथ सेवा में मानते हुए आगे बढ़ें। लेटर्स पेटेंट अपील को स्वीकार किया जाता है।

पटना उच्च न्यायालय का निर्णय आदेश

==========

कोरमः माननीय मुख्य न्यायाधीश

और

माननीय न्यायमूर्ति श्रीमती अंजना मिश्रा

मौखिक निर्णय

(द्वारा: माननीय मुख्य न्यायाधीश)

तारीखः 10-05-2019

श्री बिनोद कंठ, अपीलार्थी के विद्वान वरिष्ठ वकील और राज्य के विद्वान वकील को सुना।

2. अपील 15 जनवरी, 2018 के आक्षेपित फैसले की सत्यता पर सवाल उठाती है, जिसमें विद्वान एकल न्यायाधीश ने अपीलार्थी की याचिका को यह मानते हुए खारिज कर दिया है कि अनुशासनात्मक कार्यवाही में अपीलार्थी को सजा देते समय अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा प्रक्रिया और अवसर दोनों का पालन किया गया था, जहां आरोप 8,975/- रुपये के कुछ वाउचरों की तुलना में एक निश्चित राशि का दुरुपयोग करने का था।

3. जिस पृष्ठभूमि में दंड आदेशों को विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष चुनौती दी गई थी, उस पर ध्यान देने की आवश्यकता है क्योंकि यह उत्तरदाताओं द्वारा कार्यवाही के संचालन के तरीके पर एक प्रतिबिंब है।

4. ऐसा प्रतीत होता है कि अपीलार्थी को 17 जनवरी, 2002 को इस आधार पर निलंबित कर दिया गया था कि एक टंकक-सह-लिपिक के रूप में काम करते हुए, उसने

तत्कालीन जिलाधिकारी श्री अरुनेश चावला के जाली हस्ताक्षर करके 14 वाउचर को भुनाने का प्रयास किया था। एक आरोप पत्र जारी किया गया था, लेकिन अपीलार्थी के अनुसार, ऐसे कोई दस्तावेज उपलब्ध नहीं कराए गए थे और जांच इस तरह से आगे बढ़ी जो पूरी तरह से पक्षपातपूर्ण थी और अपीलार्थी को उचित अवसर प्रदान किए बिना। वास्तव में, मुख्य विवाद उक्त वाउचर पर तत्कालीन जिलाधिकारी के हस्ताक्षर की वास्तविकता के बारे में था जिसे अपीलार्थी के खिलाफ आगे बढ़ने का आधार बनाया गया था।

5. अपीलार्थी को दूसरा कारण बताओ नोटिस 11 जून, 2004 को दिया गया था, जिसे अपीलार्थी ने 2004 के सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 10617 में चुनौती दी थी और उक्त याचिका के लंबित रहने के दौरान, निलंबन आदेश को रद्द कर दिया गया था और अंतिम आदेश 26 मई, 2005 को जिलाधिकारी, जहानाबाद द्वारा पारित किया गया, जिसके तहत अपीलार्थी को सेवा से हटा दिया गया था।

6. पहले दायर की गई रिट याचिका को उक्त आदेश को चुनौती देने वाली एक नई रिट याचिका दायर करने की स्वतंत्रता के साथ वापस ले लिया गया था और तदनुसार, अपीलार्थी ने 2005 की सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 11311 दायर की जिसमें तर्क दिया गया था कि पूरी कार्यवाही सिविल सेवा नियम, 1930 (इसके बाद "1930 नियम" के रूप में संदर्भित) के नियम 55 का उल्लंघन थी जिसे बिहार बोर्ड के विविध नियमों के नियम 167 के साथ पढ़ा गया था। इस न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश ने रिट याचिका को स्वीकार कर लिया और 26 अप्रैल, 2011 को सजा के आदेश को रद्द कर दिया।

7. जो मुद्दे उठाए गए थे, जिनमें दस्तावेजों की आपूर्ति न करना और विशेष रूप से तत्कालीन जिलाधिकारी से जिरह न करना या जिरह करने का अवसर शामिल था, अदालत ने निम्नलिखित निष्कर्षों को दर्ज करने वाली रिट याचिका को अनुमति दीः

"दस्तावेज़ प्रस्तुत न करने के संबंध में जवाबी हलफनामे में स्वीकारोक्ति पर विचार करते हुए, तत्कालीन जिलाधिकारी से पूछताछ न करना, जिन्होंने वाउचर पर अपने हस्ताक्षर करने से इनकार कर दिया और याचिकाकर्ता को अपना बचाव करने के लिए उचित अवसर की अनुपलब्धता, *यह पर्याप्त है यह अभिनिर्धारित करने के लिए कि दिनांक 26.05.2005 का आक्षेपित आदेश, जिलाधिकारी, जहानाबाद द्वारा सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियमों के नियम 55ए और बिहार बोर्ड विविध नियम के नियम 167 में निर्धारित प्रक्रिया का पूर्ण उल्लंघन करते हुए जारी किया गया था। याचिकाकर्ता को नियम के तहत प्रदान की गई उचित प्रक्रिया का पालन किए बिना विभागीय कार्यवाही में उसकी सेवा से समाप्त नहीं किया जा सकता था। ऐसे कारणों से मुझे लगता है कि आक्षेपित आदेश को अलग रखा जाना उचित है। तदनुसार, इसे रद्द कर दिया जाता है। विभागीय कार्यवाही को नए सिरे से संचालित करने के लिए मामला जिला मजिस्ट्रेट, जहानाबाद को वापस भेज दिया जाता है। इस बीच, याचिकाकर्ता को विभागीय कार्यवाही के अंत तक और एक उचित आदेश पारित होने तक सभी परिणामी लाभों के साथ अपनी सेवा में शामिल होने की अनुमति दी जाएगी। इस आदेश को प्रस्तुत करने/संचारित करने की तारीख से छह महीने के भीतर विभागीय जांच पूरी की जानी चाहिए। उपरोक्त टिप्पणियों के साथ, इस रिट आवेदन का निपटारा कर दिया जाता है। "*

8. इसके बाद याचिकाकर्ता, जिसे सेवा में बहाल करने का निर्देश दिया गया था, कोई प्रतिक्रिया प्राप्त करने में विफल रहा, जिसके परिणामस्वरूप उसने 2012 का एमजेसी सं. 3812 का अवमानना आवेदन दायर किया। उक्त अवमानना आवेदन को अंततः 01.02.2013 को खारिज कर दिया गया क्योंकि प्रत्यर्थियों ने अपीलार्थी के खिलाफ एक नया दंड आदेश

पारित करने का विकल्प चुना, लेकिन साथ ही, उच्च न्यायालय के फैसले के अनुपालन का पालन करने के लिए, उन्होंने उसे अन्य लाभों के साथ सेवा में बहाल कर दिया था, जो प्रत्यर्थियों के अनुसार, अपीलार्थी के लिए उपलब्ध थे।

9. जब इस तथ्य का खुलासा अपीलार्थी को नए आदेश के पारित होने के बारे में किया गया, तो उसने 2013 की सी. डब्ल्यू. जे. सी. सं. 7155 की रिट याचिका दायर की, जिसे अपीलार्थी को विभागीय अपील दायर करने की स्वतंत्रता के साथ वापस लेने की अनुमति दी गई थी। अपीलार्थी ने अपने खिलाफ पारित सजा के आदेश को चुनौती देते हुए एक विभागीय अपील दायर की, जिसे आयुक्त ने 28 मार्च, 2014 को खारिज कर दिया था। इसके बाद, वर्तमान अपील को जन्म देने वाली रिट याचिका यह तर्क देते हुए दायर की गई कि आक्षेपित आदेश न केवल नियमों का उल्लंघन करते हैं, बल्कि स्पष्ट रूप से उच्च न्यायालय के पहले के फैसले का भी उल्लंघन करते हैं, जिसे ऊपर उद्धृत किया गया है।

10. तर्कों का सार यह था कि न तो कोई अवसर प्रदान किया गया था और न ही अपीलार्थी को वह सामग्री उपलब्ध कराई गई थी जिस पर भरोसा किया गया था ताकि वह उन वाउचरों पर तत्कालीन जिलाधिकारी के जाली हस्ताक्षर के संबंध में आरोप के खिलाफ अपना बचाव कर सके जो पूरी जांच का आधार थे। यह भी तर्क दिया गया कि निर्धारित प्रक्रिया का पालन नहीं किए जाने के कारण, 28 दिसंबर, 2011 को एक पत्र जारी करने से इस प्रकार निर्धारित प्रक्रिया के अंतर को पूरा नहीं किया जा सका क्योंकि नियमों में किसी भी पूछताछ को जारी करने या अपराधी को लिखित रूप में देने की परिकल्पना नहीं की गई है कि वह उस गवाह से क्या सवाल पूछने का प्रस्ताव रखता है जिसके संबंध में हस्ताक्षर के जालसाजी के संबंध में सवाल शामिल हैं। अपीलार्थी का यह तर्क था कि उच्च न्यायालय द्वारा मामले को रिमांड पर लिए जाने के बाद 28 दिसंबर, 2011 को नोटिस जारी करना सही प्रक्रिया नहीं थी और यह जांच की निष्पक्षता भी सुनिश्चित नहीं करता था, क्योंकि जिलाधिकारी श्री अरुणेश चावला, जिनके हस्ताक्षर पर अपीलार्थी द्वारा जाली होने के रूप में

भरोसा करने की मांग की गई थी, को जांच कार्यवाही के दौरान कभी भी पेश नहीं किया गया था और न ही जाली हस्ताक्षर किए जाने के बारे में विभाग को दिए गए उनके संचार को कभी भी अपीलार्थी को प्रदान किया गया था।

11. यह भी आग्रह किया गया कि तत्कालीन प्रधान लिपिक, जिनके बारे में कहा जाता है कि उन्होंने उक्त वाउचर सौंप दिए थे और जिन्हें जांच के लिए पेश किया गया था, ने बहुत अस्पष्ट बयान दिया और अपीलार्थी को बिना किसी अवसर के उससे जिरह करने के लिए बाहर बैठाया गया। अतः इसके परिणामस्वरूप अपीलार्थी के प्रति गंभीर पूर्वाग्रह पैदा हुआ क्योंकि आरोप का पूरा आधार बनने वाले साक्ष्य को कभी भी सामने नहीं लाया गया और इसलिए, आरोप को ऐसे किसी भी भौतिक साक्ष्य का नेतृत्व करके या अपीलार्थी को कार्यवाही का विरोध करने का अवसर प्रदान करके साबित नहीं किया गया।

12. यह इस पृष्ठभूमि में है कि अपीलार्थी के विद्वान वरिष्ठ वकील श्री बिनोद कंठ का तर्क है कि अपीलार्थी के प्रति पूर्वाग्रह का प्रक्रिया का अनुपालन और अपीलार्थी द्वारा बार-बार लिखित अनुरोध के बावजूद प्रासंगिक सामग्री प्रदान नहीं करने के कारन स्पष्ट पता चलता है। संक्षेप और सार में, उनका तर्क यह है कि यह मानते हुए भी कि अपीलार्थी ने 28 दिसंबर, 2011 के पत्र का कोई जवाब नहीं दिया, फिर भी उत्तरदाताओं की ओर से यह अनिवार्य था कि वे जिलाधिकारी को पेश करके और अपना बयान दर्ज करके अपने मामले को साबित करें क्योंकि यह आवश्यक सबूत था जिससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता था या अन्यथा कि क्या जिलाधिकारी ने वाउचर पर हस्ताक्षर किए थे या नहीं।

13. अपीलार्थी की ओर से उपरोक्त तर्क के लिए, राज्य ने आग्रह किया कि अपीलार्थी को पूरा अवसर दिया गया था, जिसने इसका लाभ नहीं उठाया और 28 दिसंबर, 2011 का पत्र उच्च न्यायालय के पहले के फैसले के अनुपालन में था, इसलिए अपीलार्थी शिकायत नहीं कर सकता कि कोई अवसर नहीं दिया गया था। राज्य के विद्वान वकील द्वारा यह आग्रह

किया जाता है कि एक बार जब अपीलार्थी को तत्कालीन जिलाधिकारी से किए जाने वाले किसी भी प्रश्न के संबंध में अपनी पूछताछ प्रदान करने के लिए बुलाया गया था, तो यह पर्याप्त अवसर था और इसका लाभ उठाने में विफल रहने के कारण, जांच कार्यवाही में किसी भी पूर्वाग्रह या अन्याय की कोई शिकायत नहीं की जा सकती है। यह आग्रह किया जाता है कि जिलाधिकारी ने वाउचरों को देखने के बाद 10.12.2001 को पत्र लिखाया कि उस पर उनके हस्ताक्षर नहीं हैं। इसके बाद, अपीलार्थी को मूल वाउचरों को देखने का अवसर प्रदान किया गया था और उसे लिखित रूप में अपने प्रश्न देने के अवसर के साथ उक्त वाउचरों की छाया प्रतियां भी प्रदान की गई थीं, लेकिन चूंकि उसने स्वयं इस पर कार्रवाई नहीं की थी, इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि जांच प्राधिकरण ने किसी भी प्रक्रिया का उल्लंघन करते हुए कार्रवाई की थी ताकि अपीलार्थी के प्रति कोई पूर्वाग्रह पैदा हो।

14. विद्वान वकील ने आगे प्रस्तुत किया है कि अपीलार्थी ने 8,975/- रुपये की राशि जमा की थी और जांच अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों को देखते हुए, विद्वान एकल न्यायाधीश ने रिट याचिका को खारिज करने के लिए आगे बढ़ते हुए कोई त्रुटि नहीं की है ताकि इस अपील में कोई हस्तक्षेप किया जा सके। अतः तर्क यह है कि न तो दंड आदेश और न ही अपीलीय आदेश में कोई कभी है और कानून के अनुरूप होने के कारण दंड अपीलार्थी के पक्ष में किसी भी नरमी की मांग नहीं करता है।

15. उठाए गए निवेदनों पर विचार करने के बाद, हम तैयार संदर्भ के लिए 1930 के नियमों के नियम 55 को उद्घृत कर सकते हैं।

> *"55. लोक सेवक पूछताछ अधिनियम, 1850 के प्रावधानों के प्रति पूर्वाग्रह के बिना, किसी सेवा के सदस्य को बर्खास्त करने, हटाने, अनिवार्य सेवानिवृत्ति [या कटौती] का कोई आदेश पारित नहीं किया जाएगा (उन तथ्यों के आधार पर आदेश के अलावा जिसमें उसकी दोषसिद्धि की सजा आपराधिक*

न्यायलय या कोर्ट मार्शल के द्वारा हुई है।) जब तक कि उसे उन आधारों के बारे में लिखित रूप में सूचित नहीं किया गया है, जिनके आधार पर कार्रवाई करने का प्रस्ताव है और उसे अपना बचाव करने का पर्याप्त अवसर दिया गया है। जिन आधारों पर कार्रवाई करने का प्रस्ताव है, उन्हें एक निश्चित आरोप या आरोप के रूप में कम कर दिया जाएगा, जिसे उन आरोपों के बयान के साथ आरोपित व्यक्ति को सूचित किया जाएगा, जिन पर प्रत्येक आरोप आधारित है। ***और किसी अन्य परिस्थिति पर जिसे मामले पर आदेश पारित करते समय ध्यान में रखने का प्रस्ताव है।*** *उचित समय के भीतर अपने बचाव का लिखित बयान देना और यह बताना उसके लिए आवश्यक है कि क्या वह व्यक्तिगत रूप से सुनना चाहता है। यदि वह ऐसा चाहता है या यदि प्राधिकरण* ***संबंधित प्राधिकरण ऐसा निर्देश देता है कि एक मौखिक जांच आयोजित की जाएगी। उस जांच में मौखिक साक्ष्य की सुनवाई ऐसे आरोपों के बारे में की जाएगी जो स्वीकार नहीं किए गए हैं, और आरोपित व्यक्ति गवाहों से जिरह करने, व्यक्तिगत रूप से साक्ष्य देने और ऐसे गवाहों को बुलाने का हकदार होगा, जो वह चाहे, बशर्ते कि जांच करने वाला अधिकारी विशेष और पर्याप्त कारणों से लिखित रूप में दर्ज करके गवाह को बुलाने से इंकार कर सकता है।।*** *कार्यवाहियों में साक्ष्य का पर्याप्त अभिलेख और निष्कर्षों का विवरण और उसके आधार शामिल होंगे।*

यह नियम वहां लागू नहीं होगा जहां संबंधित व्यक्ति फरार हो गया है या जहां अन्य कारणों से उसके साथ संवाद करना अव्यवहारिक है। सभी या किसी भी ***नियम के प्रावधान, असाधारण मामलों में, लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले विशेष और पर्याप्त कारणों के लिए माफ किए जा सकते हैं, जहां नियम की आवश्यकताओं का ठीक से पालन करने में कठिनाई होती है और***

उन आवश्यकताओं को आरोपित व्यक्ति के साथ अन्याय किए बिना माफ किया जा सकता है।

इस नियम में निर्धारित पूरी प्रक्रिया का पालन नियम 49 के स्पष्टीकरण II में वर्णित परिस्थितियों में डिस्चार्ज किए गए परिवीक्षाधीन के मामले में नहीं किया जाएगा। ऐसे मामलों में, यह पर्याप्त होगा यदि परिवीक्षाधीन को उन आधारों से अवगत होने के बाद आरोपमुक्त करने के खिलाफ लिखित में कारण दिखाने का अवसर दिया जाता है, जिन आधारों पर उसे आरोपमुक्त करने का प्रस्ताव है और आदेश पारित होने से पहले उसके जवाब पर विधिवत विचार किया जाता है। "

16. उक्त नियमों के अवलोकन से इस बात में कोई संदेह नहीं रहता है कि नियमों के तहत मौखिक जांच पर स्पष्ट रूप से विचार किया जाता है और एक बार जब उत्तरदाता वाउचर पर उनके हस्ताक्षर से इनकार करने वाले जिलाधिकारी के पत्र पर भरोसा कर रहे थे, तो हमारी राय में, यह उत्तरदाताओं की ओर से अनिवार्य और अनिवार्य था कि उन्होंने पहले अपीलार्थी को उक्त पत्र की एक प्रति प्रदान करके उक्त नियमों का पालन किया हो, जो स्वीकार किया गया था कि नहीं किया गया था और दूसरा, कम से कम जिलाधिकारी को प्रमाणित करने के लिए या अन्यथा, वाउचर की सामग्री और हस्ताक्षर जो कथित रूप से जाली बताए गए थे, उन्हें पेश करने का प्रयास करना। ..

17. हमारी राय में, जिलाधिकारी को एक दस्तावेज के संबंध में गवाह के रूप में पेश होने से कोई वैधानिक या संवैधानिक प्रतिरक्षा नहीं थी, जिस पर कथित रूप से उनका हस्ताक्षर बताया कहा गया है। जिसे उन्होंने अस्वीकार कर दिया था। यह विशिष्ट आरोप होने के कारण, प्रत्यर्थियों की ओर से यह अनिवार्य था कि वे या तो जिलाधिकारी को पेश करके या अपीलार्थी को उक्त दस्तावेज़ की सामग्री की शुद्धता पर सवाल उठाने का उचित

अवसर देकर या जिलाधिकारी के हस्ताक्षर करके उक्त आरोप को साबित कर दें, जो स्वीकार किया गया था कि नहीं किया गया था। यह स्पष्ट है कि जिलाधिकारी द्वारा उनके हस्ताक्षर से इनकार करते हुए लिखा गया पत्र अपीलार्थी को कभी नहीं दिया गया था। हमें ऐसा कोई विशेष कारण नहीं मिलता है जिसने उत्तरदाताओं को इस तथ्य को छोड़कर कि वे जिले के सर्वोच्च अधिकारी थे, जिलाधिकारी से पूछताछ नहीं करने के लिए मजबूर किया हो। इस बात का कोई कारण नहीं है कि जिलाधिकारी के हस्ताक्षर से इनकार करने वाले 10.12.2001 दिनांकित पत्र की एक प्रति अपीलार्थी को क्यों नहीं दी गई।

18. इन परिस्थितियों में, निष्पक्षता की प्रक्रिया का स्पष्ट रूप से उल्लंघन किया गया है और परिणामस्वरूप, हमारा विचार है कि मामले के इस पहलू की अनुशासनात्मक और अपीलीय अधिकारियों दोनों द्वारा अनदेखी की गई है और विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा गलती से पुष्टि की गई है। वह सामग्री जिसके आधार पर अपीलार्थी को सेवा से हटाकर दंडित करने की मांग की गई थी, इसलिए एक प्रासंगिक सामग्री थी जिसे साबित किया जाना चाहिए था या यहाँ तक कि अपीलार्थी को उसके उत्तर के लिए सामना करने के लिए साबित या यहां तक कि प्रदान किया जाना चाहिए था।।

19. 28 दिसंबर, 2011 का नोटिस नियम या निष्पक्षता के नियम के अनुरूप नहीं है क्योंकि नियम से यह संकेत नहीं मिलता है कि पूछताछ मौखिक जांच का विकल्प होगी। हम पाते हैं कि प्रतिवादियों द्वारा उक्त प्रक्रिया का प्रयास केवल जांच कार्यवाही में जिलाधिकारी के बयान से बचने के लिए किया गया था, जो उचित नहीं लगता है। इसलिए यह स्पष्ट रूप से प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन करता है, इसलिए ऐसे मामले में जहां अपराधी को सेवा विच्छेद के साथ दंडित करने की मांग की जाती है। हम यह भी पाते हैं कि प्रक्रिया मुकदमे के पहले दौर में विद्वान एकल न्यायाधीश के दिनांक 26.04.2011 के निर्णय में दिए गए संकेतों के अनुरूप नहीं थी। सजा के आदेश के परिणामस्वरूप नागरिक परिणाम हुए हैं और तथ्यों पर हमने पाया है कि उचित अवसर से इनकार करने के साथ-

साथ एक प्रासंगिक दस्तावेज़ की गैर-आपूर्ति के परिणामस्वरूप वास्तविक पूर्वाग्रह हुआ है। प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत के रूप में अंकित एक वैधानिक प्रावधान के जनादेश का उल्लंघन किया गया है। हम निम्नलिखित निर्णयों से अपने निष्कर्षों में पूर्ण समर्थन पाते हैंः

1. (1996) 3 एससीसी 364 (स्टेट बैंक ऑफ पटियाला बनाम एस. के. शर्मा)

2. (2006) 9 एस. सी. सी. 691 (मारवाड़ ग्रामीण बैंक बनाम राम पाल चौहान)

3. 1995 पूरक (3) एस. सी. सी. 212 (एस. सी. गिरोतरा बनाम यूनाइटेड कमर्शियल बैंक)

4. 1970 (1) एस. सी. सी. 479 (पंजाब राज्य बनाम दीवान चुनी लाल)

20. इसलिए, हम अनुशासनात्मक या अपीलीय प्राधिकरण द्वारा पारित आदेश को कानूनी रूप से टिकाऊ नहीं पाते हैं और उन्हीं कारणों से, हम विद्वान एकल न्यायाधीश के आक्षेपित निर्णय को बनाए रखने के लिए उत्तरदायी नहीं पाते हैं क्योंकि अपीलार्थी के विद्वान वकील निर्णय की सहायता लेने में सही हैं जैसा कि उन्होंने कुलदिप सिंह बनाम पुलिस आयुक्त और अन्य, (1999) 2 एस. सी. सी. 10 (पैरा 27,32 और 42) में प्रतिवेदित मामले में उद्धृत किया है। अब यह बहुत से निर्णयों में, जो **टेलर बनाम टेलर [(1876) 1 चांसरी डिवीजन 426]**, से उसके बाद **[1964] एसी 40 (रिज बनाम बाल्डविन और अन्य)** और **एआईआर 1978 एससी 851 (मोहिंद्र सिंह गिल और एक अन्य बनाम मुख्य चुनाव आयुक्त, नई दिल्ली और अन्य)**, तक अच्छी तरह स्थापित है कि यदि निर्धारित प्रक्रिया का एक विशेष तरीके से पालन किया जाना है, तो इसे उससे विचलित नहीं किया जा सकता है और तदनुसार ऐसी प्रक्रिया का कोई भी उल्लंघन किसी भी कार्रवाई को या तो प्रशासनिक या अर्ध-न्यायिक, विशेष रूप से अनुशासनात्मक कार्यवाही को दूषित कर देगा। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, जिलाधिकारी के परीक्षण की निर्धारित प्रक्रिया से विचलित होने या

उस पत्र की प्रति प्रदान न करने की कोई असाधारण परिस्थितियाँ नहीं थीं, जिसके द्वारा हस्ताक्षर से इनकार किया गया था।

21. इसलिए हम अपील को स्वीकार करते हैं और दिनांक 15.01.2018 के आक्षेपित फैसले के साथ-साथ 28 मार्च, 2014 के अपीलीय आदेश के एवं दिनांक 28 मार्च, 2014 के सजा के आदेश को भी रद्द कर देते हैं। अपीलार्थी को सभी परिणामी लाभों के साथ सेवा में बहाल किया जाएगा। प्रत्यर्थियों को तदनुसार वेतन, भत्ते और नियमों के अनुसार स्वीकार्य सभी परिलब्धियों के साथ उसे सेवा में मानते हुए आगे बढ़ना चाहिए।।

(अमरेश्वर प्रताप साही, मुख्य न्यायाधीश)

(अंजना मिश्रा, न्यायमूर्ति)

पीएनएम

खण्डन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।